पाठशाला
भीतर और बाहर
पाठकों के विचार

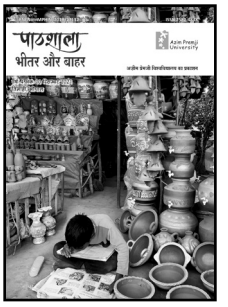

पाठशाला अंक 10 में प्रकाशित द्रोण साहू का लेख *बच्चों की भाषा के सम्मान के मायने : एक अनुभव* काफ़ी संवेदनशीलता से लिखा गया है। यह हमें गम्भीर भाषा समस्या को समझने की ओर इंगित करता है। बच्चे जब अपनी क्षेत्रीय भाषाओं के साथ कक्षा में आते हैं तो उनके लिए खुलकर बोलना कठिन होता है और जब शिक्षक द्वारा भाषा की इस समस्या का ध्यान नहीं रखा जाता तो बच्चे कक्षा के अन्दर चुप रहने लगते हैं। इस तरह के लेखों को पढ़कर शिक्षक व बच्चों के बीच बेहतर रिश्ते की पहल भी दिखाई देती है। लेख में इस ओर भी इशारा किया गया कि कक्षा में हर बच्चा महत्त्वपूर्ण होता है।

ये लेख कक्षा में हमें हर भाषा का महत्त्व भी बताता है। मैं अपनी कक्षाओं में भी इस तरह के उदाहरण देख पाती हूँ, जब बच्चा घर और स्कूल की भाषा की दुविधा में रहता है। पर जब हम उनकी घर की भाषा से शुरुआत करते हैं तो वह अधिक स्वतंत्र होकर अपनी बात रख पाते हैं।

- किरण पाटीदार, शासकीय कन्या प्राथमिक शाला, चोली, महेश्वर

अनिल सिंह के लेख से मुझे कक्षा में कहानियों की प्रासंगिकता के कुछ नए आयाम भी सीखने को मिले। लेख ने इस बात की पुष्टि एवं समर्थन किया है कि किस प्रकार कहानियों को छात्र-छात्रों के बीच स्वीकार्यता मिलती है और वे मनोयोग व संवेदनाओं के साथ कहानी के साथ एकाकार हो जाते हैं। यह सीखने को भी मिला कि कहानियाँ किसी भी विषय में शिक्षण का एक असरदार ज़रिया बन सकती हैं। कहानियों की वास्तविक क्षमता है कि वह छात्रों के मध्य सहज भाव से स्वीकार्यता व जुड़ाव उत्पन्न कर पाती हैं। अब यदि इन्हीं कहानियों के ज़रिए विषय की बारीक़ियों को भी बुनकर छात्रों के बीच ले जाया जाए तो काफ़ी हद तक छात्रों को विषय समझने में भी मदद मिलेगी।

यदि मैं गणित की बात करूँ तो अकसर कुछ छात्र इबारती प्रश्नों से जूझते दिखते हैं। इसका एक समाधान तो कहानियों में ही छुपा हुआ दिखता है कि क्यों न आरम्भ से ही विषय को कक्षा में छोटी-छोटी कहानियों के रूप में प्रस्तुत करते हुए ले जाया जाए जिससे छात्रों को कहानियों से सूचनाएँ एकत्र करने और समाधान की ओर अग्रसर होने में मदद मिलेगी।

- नरेंद्र कोठियाल, अज़ीम प्रेमजी स्कूल मातली , उत्तरकाशी, उत्तराखंड

पाठशाला के हर अंक की तरह नौवाँ अंक भी मेरे लिए काफ़ी प्रासंगिक है। अंक के लेखों को पढ़ने के बाद मुझे अपने कक्षा शिक्षण के लिए कई महत्त्वपूर्ण बिन्दु मिले। ईमानदारी से कहूँ तो इन लेखों को पढ़ना मेरे लिए थोड़ा कठिन था जिसके मुख्यतः दो कारण थे। पहला यह कि मैं ज़्यादातर विज्ञान एवं विज्ञान शिक्षण से जुड़ी सामग्री पढ़ती हूँ। दूसरा कारण है लेखों में हिन्दी भाषा का उपयोग, जो बोलचाल में इस्तेमाल होने वाली हिन्दी से थोड़ा अलग थी।

मधु कुशवाहा द्वारा लिखित *जेंडर संवेदनशील शिक्षकों का सृजन* पढ़ते हुए मैं एक महिला शिक्षक के रूप में अपने कुछ शिक्षण अनुभवों को उससे जोड़ पा रही थी। मुझे दो उदाहरण याद आए। पहला, जब एक पुरुष सहकर्मी ने मुझे उच्च प्राथमिक छात्रों को जीव विज्ञान पढ़ाने के लिए कहा, जबकि स्वयं उन्होंने अपने लिए भौतिकी विषय पढ़ाना चुना। एक अन्य उदाहरण में, हम लकड़ी के बोर्ड पर विद्युत सर्किट बना रहे थे और इसके लिए लकड़ी काटने, ड्रिलिंग, सोल्डरिंग, आदि की आवश्यकता थी। पुरुष शिक्षकों ने कार्य में हस्तक्षेप करके काम की प्रक्रिया को इस तरीक़े से बाधित किया कि महिला शिक्षकों की इन कार्यों में प्रतिभागिता गौण हो गई।

मेरा मानना है कि जेंडर संवेदना को विकसित करने की नींव परिवार और विद्यालय से ही रखी जाती है। हालाँकि, छात्रों के बीच इसे स्थापित करने से पहले शिक्षकों को स्वयं इस विषय में संवेदनशील होने की आवश्यकता है। लेखिका द्वारा दिए गए सुझाव, कि इसे बीएड के पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाए, से मैं पूर्णतः सहमत हूँ।

लेखिका लिखती हैं कि विद्यालय ख़ुद कुछ सीमाएँ बनाते हैं जो सम्भावनाओं को सीमित करने वाली होती हैं, क्योंकि जाने-अनजाने शिक्षकों की बातचीत, व्यवहार और यहाँ तक कि उनके पढ़ाने के तरीक़े भी बच्चों के मन में विपरीत लिंगों से जुड़ी रूढ़िवादी सोच को बढ़ाते हैं। हम अकसर स्कूल संस्कृति में कुछ बातों को देखते हैं, जैसे– पुरुष और महिला शिक्षकों एवं छात्र-छात्राओं का अलग समूह में बातचीत करना, बातचीत की विषयवस्तु में अन्तर होना, समग्र स्कूल संचालन में महिला और पुरुष शिक्षकों की फ़र्क़ भूमिका, महिला शिक्षिकाओं की पुरुष शिक्षकों पर निर्भरता, आदि।

समाज में व्याप्त इन रूढ़ियों को दूर करने में अध्यापक की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। महिला शिक्षकों के लिए भी ज़रूरी है कि वे छात्रों के लिए एक उदाहरण बनें कि वह एक पुरुष सहयोगी के बराबर प्रदर्शन कर सकती हैं। स्कूल को ऐसा वातावरण बनाने की भी आवश्यकता है जहाँ पुरुष और महिला शिक्षक दोनों को विकसित होने और प्रदर्शन करने के समान अवसर और अनुकूल परिस्थितियाँ मिलें।

लेखिका द्वारा *युवा छात्रों के साथ व्यवहार करने* वाले उद्धृत उदाहरण में जेंडर मुद्दों से जुड़ी छात्रों की पहले से मौजूद रूढ़िवादी मानसिकता दिखाई देती है। जब एक पुरुष छात्र ने लेखन में बार-बार महिला क्रिया शब्द इस्तेमाल करने को नज़रअन्दाज़ किया और लेखिका के पूछने पर कहा कि इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता है, तब लेखिका का छात्र को महिला क्रिया शब्दों से सम्बोधित करना और कॉपी में नोट लिखना एक चिन्तनशील कार्य था।

कमलेश चंद्र जोशी के लेख *प्राथमिक कक्षाओं में लिखना सीखना : कुछ अवलोकन* ने मुझे विस्तृत अन्तर्दृष्टि प्रदान की। लेख से मेरी भाषा कौशल और भाषा में उत्कृष्टता विकसित करने के लिए प्रतिक्रिया देने की समझ बनी। लेखक ने बताया है कि वर्तनी की त्रुटियों को ठीक करना और विराम चिह्नों पर ध्यान केन्द्रित करना भाषा कक्षा में एक प्रमुख या व्यापक अभ्यास है। मैं भी इस अभ्यास को अपनी कक्षा में दोहराती हूँ। मुझे भी भाषा कौशल में सुधार या उन्हें और अधिक लिखने को प्रेरित करने के लिए प्रासंगिक सकारात्मक प्रतिक्रिया प्रदान करना मुश्किल लगता है।

लेखक द्वारा कहानी को आगे बढ़ाने के सन्दर्भ में मेरे विचार थोड़े अलग हैं। जैसे कि यदि छात्र को उदाहरण देकर समझाया जाए तो वह अपनी कल्पनाशीलता का प्रयोग न करके सिर्फ़ दिए गए

उदाहरण तक ही सीमित हो सकता है। मैं इस बात को अपनी कक्षा में प्रयोग करना चाहूँगी और समझने की कोशिश करूँगी कि जो मैंने सोचा था, वह कक्षा में होता है या नहीं।

लेख में शिक्षक के लेखन को बच्चों के समक्ष साझा करने का सुझाव मुझे दिलचस्प व नवाचारी लगा। मैं सहमत हूँ कि नमूना उत्तर या नमूना लेखन छात्रों को अपने विचार लिखने में सही दिशा देते हैं, उनकी सोचने की क्षमता को बढ़ाने के साथ-साथ उन्हें आसपास के परिवेश के साथ सम्बन्ध स्थापित करने में भी मदद करते हैं।

इन लेखों में दिए गए सुझावों व विचारों को अपनी कक्षाओं में क्रियान्वित करने के लिए मैं काफ़ी उत्साहित हूँ।

- अर्चना द्विवेदी, अज़ीम प्रेमजी स्कूल मातली, उत्तरकाशी

पाठशाला के अंक 10 के अनुक्रम में शिक्षणशास्त्र खण्ड में लिखे पहले लेख का शीर्षक देखा, 'मैं महापल्ली में रहता हूँ' कुछ रोचक लगा तो सोचा यही पढ़ा जाए। लेख कक्षा 1 के बच्चे के लेखन के नमूने से शुरू हुआ। मीनू ने काफ़ी बारीक़ी से बच्चे की लिखाई का अवलोकन करते हुए यह बताने की कोशिश की कि कैसे हम बच्चों के लेख से यह जान पाते हैं कि उन्हें भाषा की कितनी समझ है और किस तरह सकारात्मक सोच रखते हुए उन कुछ पंक्तियों से हम यह बता सकते हैं कि बालक को किन-किन सम्प्रत्ययों का ज्ञान है और वह क्या-क्या जानता है। बजाय इसके कि हम ये देखें कि उसने लिखने में व्याकरण सम्बन्धी कितनी ग़लतियाँ की हैं, हमें यह समझना चाहिए कि वह लिखना सीखने की प्रक्रिया में कहाँ तक पहुँचा है और उसके अनुभव क्या हैं? मीनू ने यह भी सुझाया कि हमें ऐसे लेख जाँचते हुए सुधार कहाँ, क्यों, और कैसे करना चाहिए। मैं उनकी बातों से ख़ुद को जोड़ पाई क्योंकि अभी हाल ही में कक्षा 1 की हिन्दी की वर्कशीट जाँचते हुए मैंने काफ़ी ऐसे साक्ष्य पाए जिनमें बच्चों ने इन्वेंटेड स्पैलिंग का प्रयोग करते हुए अपनी बात रखी। मैंने पाया कि बच्चों को बहुत सारे वर्णों का ज्ञान है और वे अपनी भावनाओं को व्यक्त करने की क्षमता रखते भी हैं और करते भी हैं। लेखिका ने कई तरीक़े भी साझा किए जिनसे हम बच्चों को लिखने की तरफ़ अग्रसर कर सकते हैं और उनका लेखन बेहतर बना सकते हैं। बच्चों को मौलिक लेखन और बाल साहित्य पढ़ने के अवसर देना उनमें से एक है।

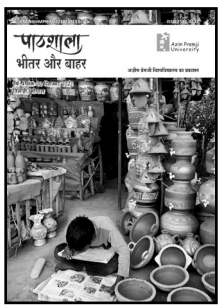

लेख सोचने का नया आयाम प्रदान करता है कि हमें बच्चों का लेखन सिर्फ़ ग़लतियाँ निकालने की दृष्टि से नहीं, बल्कि सकारात्मकता की दृष्टि से देखना चाहिए।

- निशा नेगी, शिक्षक, अज़ीम प्रेमजी स्कूल मातली, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड

नि:सन्देह पत्रिका के अंक 10 में अनुभव-आधारित शिक्षण परिस्थितियों को सहज बनाकर प्रस्तुत करने का प्रयास श्लाघनीय है। आलेखों की शृंखला में कक्षा 1 के बच्चे से स्व-परिचय लिखवाने का प्रयास एक विशिष्टता का द्योतक है। एक शिक्षक प्रशिक्षक के रूप में, यह मेरे लिए अनुभव के नए क्षितिज खोलने के समान है, जो इन्टर्नशिप के लिए विद्यालयों में आ रहे प्रशिक्षणार्थियों को प्रेरणा देने का कार्य करेगा। शिव पाण्डेय का अनुभव-आधारित शोध लेख, विचार करने का माध्यम बना। इस आलेख में अन्तर-अनुशासनात्मक सन्दर्भ के भी दर्शन हो रहे हैं। *कुत्ते के अंडे* नामक कहानी संग्रह का उल्लेख मात्र ही आलेख को आकर्षक बनाता है एवं पाठक के मन में उत्सुकता जगाता है। आरम्भिक भाषाई विकास में चित्रों एवं भाषा के योगदान पर समंक-आधारित प्रयोगात्मक शोध

रुचिप्रद होने के साथ ही गतिविधि-आधारित शिक्षण के महत्त्व को रेखांकित करने वाला रहा। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* की मूल धारणा, कि बच्चों को मातृभाषा में शिक्षा देनी चाहिए, को 2019 में ही मूर्तरूप देने का प्रयास द्रोण साहू द्वारा किया जाना एक शिक्षक की दूरदर्शिता का परिचायक है। यही प्रयास दिनेश पटेल के लेख में भीली भाषा को लिपि स्वरूप देने में दिखता है।

डॉ. पल्लव पांडे, सहायक आचार्य (अँग्रेज़ी), शिक्षा संकाय, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी), उदयपुर, राजस्थान

हेमवती चौहान का लेख *बाल साहित्य की ज़रूरत,* स्वयं में ही मुकम्मल है। लेख के आरम्भ में ही इसका इल्म हो जाता है कि बाल साहित्य सम्भावनाओं से भरा साहित्य है। इसमें हम अपने अनुभव जोड़कर नई समझ विकसित करते हैं। वास्तव में, बच्चे भी जब किसी कहानी को पढ़ते हैं तो कहीं-न-कहीं उसके विषय में एक धारणा बनाते हैं और अपने अनुभव या पूर्वानुमान से जोड़कर उसे समझते हैं। लेखिका ने बच्चों को बातचीत के विभिन्न अवसर दिए और विभिन्न गतिविधियों से जोड़ा। एक बात जो अहम है वो ये कि शिक्षक को उत्साही और सक्रिय होना चाहिए व उसमें स्वयं पढ़ने की आदत होनी चाहिए।

इसमें एक-दो चीज़ मैं अपनी ओर से जोड़ना चाहूँगी कि अधिकांशतः कक्षा एक एवं दो के बच्चे हर शब्द नहीं समझ सकते, लेकिन भाषा की ध्वनि व लय से लगाव पैदा करना सीख सकते हैं। इसलिए हम कविताओं को लयबद्ध तरीक़े से गाकर बच्चों को उससे जोड़ सकते हैं। यहाँ पर एक बात का और ध्यान रखा जाए कि जब कोई कविता या कहानी बच्चों को सुनाएँ तो उसका उद्देश्य अवश्य बताएँ।

- ममता, सहायक अध्यापक, राजकीय प्राथमिक विद्यालय मनसूना, ब्लॉक उखीमठ, ज़िला रुद्रप्रयाग

पाठशाला के 10वें अंक में लेखकों द्वारा रोचक और पठनीय आलेख, अनुभव और कहानियाँ लिखी गई हैं। मुझे जेंडर असमानता जैसे एक महत्त्वपूर्ण विषय पर विजय प्रकाश का आलेख प्रभावी लगा। लेखक ने बड़े ही रोचक व सुन्दर तरीक़े से बच्चों के जेंडर सम्बन्धी दृष्टिकोण को बदलने का प्रयास किया है। यह जानना मज़ेदार है कि कैसे एक अध्यापक अपने छात्रों द्वारा समाज की संकीर्ण सोच में आमूलचूल परिवर्तन ला सकता है।

अनिल सिंह का लेख *कहानियाँ आख़िर करती क्या हैं?* में किसी कथानक को रोचक तरीक़े से प्रस्तुत करते हुए और अलंकारों व मुहावरों का प्रयोग करते हुए कहानी सुनाने के तौर-तरीक़ों पर बात की गई है। इसमें बच्चों पर किसी कहानी के पड़ने वाले प्रभाव को दर्शाया गया है।

अन्त में, मैं निशा नाग द्वारा किताब *साधारण लोग, असाधारण शिक्षक* की लिखी गई समीक्षा 'शिक्षकों की प्रेरणादायी गाथाएँ' पर दो शब्द कहना चाहूँगी। सर्वविदित है कि हमारे सरकारी विद्यालयों के शिक्षक विपरीत परिस्थितियों में भी विद्यालयों का संचालन कर रहे हैं। लेख दर्शाता है कि अधिकांश सरकारी विद्यालयों के अध्यापक अपने अथक प्रयासों से विद्यालयों की दशा सुधारने में लगे हैं, ताकि विद्यालयों की छात्र संख्या बढ़े व समाज का रुझान सरकारी स्कूलों की ओर हो जाए। सरकारी शिक्षा व्यवस्था की सकारात्मक छवि प्रस्तुत करता यह लेख हमें ऊर्जा प्रदान करता है।

- मीरा आर्या, राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय कुलॉऊ, गरुड़, बागेश्वर, उत्तराखंड

पाठशाला का 10वाँ अंक हमें सीखने-सिखाने की प्रक्रिया के विभिन्न पहलुओं को सहजता से खोजने व समझने की ओर ले जाता है। बातों-बातों में लेखक विजय प्रकाश जैन ने अपने लेख

में जिस प्रकार लड़के-लड़की में समानता दर्शाने का प्रयास किया है, यह संवेदनाओं से भरा है। बच्चों में प्रारम्भ से ही लड़कियों की क्षमता को कम न समझने की ओर इशारा किया गया है। जेंडर मुद्दे को प्रभावशाली तरीक़े से इस लेख में प्रस्तुत किया है।

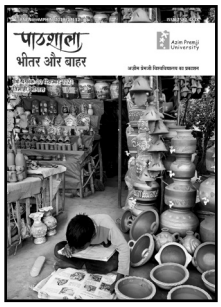

लेखिका नीतू यादव ने *भेड़िए को दुष्ट क्यों कहते है चलो पता लगाएँ? लेख में* नकारात्मकता के पहलुओं को सकारात्मक तरीक़े से उजागर किया है। भेड़िए की प्रवृत्ति से मनुष्य के स्वभाव को बताने का प्रयास किया है। अनिल सिंह के लेख में कहानियों के शिक्षा में महत्त्व को रोचक ढंग से लिखा गया है और कुछ कहानियों के ज़रिए मन में चल रहे आवेगों को बाहर लाने का प्रयास किया गया है। कहानियों द्वारा ज्ञान निर्माण को सुदृढ़ बनाने का रास्ता दिखाया गया है? शिव पाण्डेय के लेख में पीयर इंस्ट्रक्शन शिक्षण पद्धति के अनुभव विचारणीय हैं।

लेखिका अंजना त्रिवेदी ने *आपदा में सामाजिक विज्ञान का चेहरा* लेख में लॉकडाउन के दौरान एक शिक्षिका की समस्या व असमंजस को दिखाया है। भाषा सीखने में आने वाली कठिनाइयाँ व इनसे उबरने के नए तरीक़े बताए गए हैं। लेख कहता है, विषय की गहरी समझ बच्चों के साथ मानवीय रिश्ते से बनती है। निशा नाग का *शिक्षकों की प्रेरणादायी गाथाएँ कहती किताब* आलेख भी रोचक व ज्ञान से पूर्ण है।

पत्रिका वाक़ई शिक्षक व बच्चों के अन्तर्सम्बन्धों को समझने की कुंजी है। इस पत्रिका को पढ़कर कुछ नई विधाएँ मन में घर कर रही हैं जो निश्चित ही शिक्षण व जीवन में लाभदायी सिद्ध होंगी। आशा करती हूँ, अगले अंक में गणित से सम्बन्धित कुछ नए व रोचक तथ्यों को पढ़ने का अवसर मिलेगा।

- रुकसाना बानो, राजकीय प्राथमिक विद्यालय बिमोला, गरुड़, बागेश्वर, उत्तराखण्ड

पाठशाला का 10वाँ अंक शिक्षक साथियों के लिए बहुत उपयोगी है। शैक्षिक विमर्श के अलावा यह पत्रिका शिक्षकों के अनुभव और कक्षा में उनके काम को सार्थक तरीक़े से 'रिफ्लेक्ट' करती है।

वैसे तो इस अंक की सारी सामग्री अच्छी है, लेकिन मैं विशेष रूप से ज़िक्र करुँगी *मैं महापल्ली में रहता हूँ* लेख की। मीनू पालीवाल का यह आलेख कई मायनों में हमें बच्चों के सीखने की प्रक्रियाओं का अवलोकन करने में सहायक है। यहाँ बच्चे के द्वारा किए गए कार्यों को देखने का, सकारात्मक निर्णय लेने का तथा लेख सकारात्मक सोच से बच्चे को प्रोत्साहित करने की ओर भी हमारा ध्यान आकर्षित करता है। बच्चे के द्वारा तीन-चार माह में सीखे गए शब्दों को लिखने का अवसर देकर, बारीक़ी से उसका अवलोकन करके जो निष्कर्ष निकाले गए वे बेहतरीन हैं। जैसे अक्षर पहचानना और अपने ही प्रयासों द्वारा उन्हें जोड़कर कुछ लिखने का प्रयास करना सराहनीय है। क्योंकि हम शिक्षक हैं इस प्रकार के नए सन्दर्भ जैसे तीन-चार माह में ही बच्चा जो सीख पाया है उसे स्वतः लिखने के अवसर देना और बच्चे में निहित अनूठी प्रतिभा को उभारना मायने रखता है। उदाहरण के तौर पर 'क्ष' का प्रयोग बच्चे द्वारा नए संदर्भ में करना। इस लेख से बहुत कुछ सीखने को मिला है। मीनू को साधुवाद है ही और साथ ही साधुवाद पाठशाला की पूरी टीम को भी।

- सुशील कंवर, शिक्षिका, उच्च प्राथमिक शाला जगन्नाथ पुरा, जयपुर

पाठशाला, अध्ययन-अध्यापन क्षेत्र के विभिन्न पहलुओं को समीक्षात्मक दृष्टि से उजागर करती एक बेहतरीन पत्रिका लगी।

आलेख *जेंडर संवेदनशील शिक्षकों का सृजन* हो या *लिखना : मौखिक से मौलिक की ओर* या *प्राथमिक कक्षाओं में लिखना सीखना : कुछ अवलोकन*, सभी रचनाएँ नया सिखाने के लिए तत्पर हैं। इन लेखों में शैक्षणिक जगत के लिए आवश्यक एवं चिन्तनशील मुद्दे हैं। शिक्षकों की उत्साही सहभागिता बच्चों के साथ ज़रूरी है। शुरुआती रूप में बच्चों के साथ कार्य करने में जहाँ लिखना बहुत महत्त्वपूर्ण माना जाता है वहीं सुनना, बोलना, पढ़ना, आदि का अन्तर्सम्बन्ध भी सुगम रूप से दर्शाया गया है।

स्कूली शिक्षा में जनजातियों की भागीदारी : रूमानियत से परे कुछ विचारणीय मुद्दे लेख में अमित कोहली के विचारों से यह समझ आया कि इस देश का प्रत्येक बच्चा शिक्षा का हक़दार है। उसे मुख्य धारा में शामिल होने का पूरा हक़ है। मुकेश मालवीय द्वारा रचित *क्या गणित आपको अन्धविश्वास सिखाता है?* पढ़कर गणितीय अवधारणाओं के बारे में जानकारी मिलती है। यह लेख शिक्षक वर्ग के लिए महती भूमिका निभाता है। कक्षा अनुभव के अन्तर्गत *मोहल्ले में अपनी जगह : मोहल्ला एलएसी* दूरदराज़ के इलाक़ों के लिए शिक्षा का एक उम्दा मॉडल लगा।

पत्रिका में 'शिक्षा की पहुँच सभी तक', 'आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा', 'पुस्तकें, पुस्तकालय एवं शिक्षक', गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, जैसे मुद्दों को भी शामिल करने का सुझाव है।

- पूनम भाटिया, प्रधान अध्यापक, उच्च प्राथमिक विद्यालय, बम्बाला, सुखपुरिया, जयपुर

फॉर्म 4

1. **प्रकाशन का स्थान :** अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डिवलपमेंट, प्लाट नं. 321-322, ई-8 अरेरा कॉलोनी, पंजाब नेशनल बैंक के पीछे, फार्चून प्राइड सोसायटी, त्रिलंगा, भोपाल- 462039 मध्यप्रदेश
2. **प्रकाशन की नियत अवधि :** तिमाही
3. **मुद्रक का नाम :** मनोज पी.
   राष्ट्रीयता : भारतीय
   पता : अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड, सरजापुरा, बेंगलूरु 562 125 कर्नाटक
4. **प्रकाशक का नाम :** मनोज पी.
   राष्ट्रीयता : भारतीय
   पता : अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड, सरजापुरा, बेंगलूरु 562 125 कर्नाटक
5. **सम्पादक का नाम :** गुरबचन सिंह
   राष्ट्रीयता : भारतीय
   पता : ई 8 / 103 शिवकुंज रेलवे हाउसिंग सोसायटी, स्टॉप नं. 11 के पास, अरेरा कॉलोनी, भोपाल- 462016 मध्यप्रदेश
6. **उन व्यक्तियों के नाम जिनका स्वामित्व है :**
   स्वामी : अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डिवलपमेंट
   पता : प्लॉट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव सोसाइटी, ई-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा भोपाल, मध्यप्रदेश 462039

मैं मनोज पी. घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी और विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

तारीख 9 मार्च 2022 **प्रकाशक के हस्ताक्षर**

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, भोपाल

द्वारा आयोजित संगोष्ठी

विद्यालयी शिक्षा में कला व शारीरिक शिक्षा : आवश्यकता, वर्तमान परिस्थितियाँ, सम्भावनाएँ व चुनौतियाँ

में भाग लेने के लिए आप सभी आमंत्रित हैं।

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय 2017 से देश के अलग-अलग विश्वविद्यालयों के साथ मिलकर विद्यालयी शिक्षा से सम्बन्धित विषयों पर 'शिक्षा के सरोकार' शृंखला के अन्तर्गत भारतीय भाषाओं में संगोष्ठी का आयोजन करता रहा है। इस क्रम में अब तक हिन्दी, कन्नड़ और पंजाबी भाषाओं में विभिन्न मुद्दों पर संगोष्ठियाँ आयोजित की गई हैं।

इसी शृंखला की उक्त संगोष्ठी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, भोपाल के कान्हासैय्या में नवनिर्मित परिसर में दिसम्बर,2022/जनवरी, 2023 में प्रस्तावित है।

संगोष्ठी का परिप्रेक्ष्य

कला शिक्षा व शारीरिक शिक्षा को हमेशा से ही शिक्षा का महत्त्वपूर्ण हिस्सा माना जाता रहा है। नीति एवं वैचारिक दस्तावेज़ों में भी रेखांकित किया जाता रहा है कि खेल व कला के सभी पहलू, बौद्धिक विकास एवं औपचारिक विषयों की अवधारणाओं की समझ के विकास में महती भूमिका अदा करते हैं। यह भी कि समाजीकरण की प्रक्रिया एवं भावनात्मक और संवेदनात्मक विकास में भी कला व खेलकूद की अहम भूमिका है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एनसीएफ) 2005 और कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच पर पोजीशन पेपर, दोनों ही दस्तावेज़, कला व कला-एकीकृत शिक्षा की वकालत करते हैं। ये दोनों दस्तावेज़ संगीत, नृत्य, दृश्य कला और थिएटर को एक अनिवार्य हिस्से (दसवीं कक्षा तक) के रूप में स्कूल पाठ्यक्रम में शामिल करने पर ज़ोर देते हैं। इसी तरह, शिक्षा में खेलों को एकीकृत करने की हिमायत करते हुए राष्ट्रीय खेल नीति 2001 खेलों एवं शारीरिक शिक्षा को शैक्षिक पाठ्यक्रम के साथ मिलाने तथा इसे सेकेण्डरी स्कूल तक शिक्षा का अनिवार्य हिस्सा बनाने और इसे विद्यार्थी की मूल्यांकन पद्धति में सम्मिलित करने की प्रतिबद्धता को दर्शाती है। नई शिक्षा नीति 2020 ने भी इसे अपनी वैचारिक समझ का प्रमुख हिस्सा माना है, और इसके महत्त्व को स्वीकार करते हुए यह नीति शिक्षा में भारतीय कलाओं, खेलकूद और संस्कृति को बढ़ावा देने पर ज़ोर देती है।

शारीरिक शिक्षा, खेलकूद व कला शिक्षा की स्कूल में जगह पर मंथन एवं संवाद की महती आवश्यकता है। यह समझने व विचार करने की आवश्यकता है कि यह क्यों महत्त्वपूर्ण है, नीति दस्तावेज़ इनके बारे में क्या कहते हैं, स्कूलों व शिक्षा व्यवस्था के अन्य हिस्सों में इसका क्या स्थान है व आज इसकी स्थिति क्या है, इन्हें शामिल करने के लिए किस-किस तरह के व्यवस्थित अथवा प्रयोगात्मक छोटे-छोटे प्रयास हुए हैं, इन सबके क्या अनुभव रहे हैं व इनके आलोक में आगे बढ़ने का क्या रास्ता हो सकता है व इनके ज़्यादा गम्भीरता से शामिल होने में प्रमुख अड़चनें किस प्रकार की हैं (आर्थिक हैं, व्यवस्थागत हैं, सामाजिक हैं, सांस्कृतिक हैं आदि-आदि)। यह संगोष्ठी इन सभी मसलों के इर्द-गिर्द संवाद को बढ़ावा देने के लिए है। इस सन्दर्भ में कुछ उपविषय इस तरह हो सकते हैं :

अ. स्कूली शिक्षा में कला/ सौन्दर्यशास्त्र के आयामों की मौजूदगी ...क्यों ?

1. स्कूलों में खेल व कला शिक्षा : दस्तावेज़ों में उनके प्रति दृष्टिकोण व उसका विकास/ कला और खेल शिक्षा– परिप्रेक्ष्य
2. इंसान के विकास और गहराई से सीखने में कला और खेल शिक्षा का योगदान
3. ज्ञान के एक हिस्से के रूप में कला और खेलकूद व शारीरिक शिक्षा
4. कला शिक्षा और खेल शिक्षा के सन्दर्भ में हुए प्रयोग
5. कला शिक्षा और खेल शिक्षा की मौजूदा स्थिति व सम्भावनाएँ
6. कला शिक्षा और खेलकूद : जेंडर, विशेष क्षमता वाले बच्चे, सभी की भागीदारी

आ. पूर्व प्राथमिक और प्राथमिक स्तर पर कला और खेल शिक्षा

1. सभी विद्यार्थियों में शिक्षा के प्रति दिलचस्पी पैदा करने और उनके लिए शिक्षा को अर्थपूर्ण बनाने में इनकी भूमिका
2. पूर्व प्राथमिक और प्राथमिक स्तर के लिए कला व खेल शिक्षा का दृष्टिकोण व स्वरूप
3. विषयों की चारदीवारी और कला शिक्षा व खेलकूद

इ. उच्च प्राथमिक और माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में कला और खेल

1. कला और खेल का अन्य विषयों के साथ समेकन/ अन्तर्सम्बन्ध : नवाचार, प्रतिफल, चुनौतियाँ और सम्भावनाएँ
   (अ) इस स्तर पर विषयों के शिक्षण में कला की जगह
   (ब) कला व खेलों और विषय शिक्षण से इनका जुड़ाव
2. कला और खेलकूद शिक्षण के लिए पाठ्यक्रम निर्धारण : मौजूदा स्थिति, चुनौतियाँ और सम्भावनाएँ
3. माध्यमिक स्तर के लिए कला व खेल शिक्षा का दृष्टिकोण व स्वरूप

इ. शिक्षक प्रशिक्षण : वर्तमान स्थिति, चुनौतियाँ, सम्भावनाएँ

1. कला शिक्षा व खेलकूद : शिक्षकों की तैयारी
2. सामान्य शिक्षा महाविद्यालयों में कला और खेल के लिए तैयारी की सम्भावनाओं का विश्लेषण
3. कला शिक्षा और खेलकूद : स्कूलों की तैयारी

संगोष्ठी में भाग लेने की प्रक्रिया

संगोष्ठी हिन्दी में होगी। प्रस्तुत किए जाने वाले आलेख हिन्दी भाषा में ही अपेक्षित हैं। संगोष्ठी में इनका प्रस्तुतिकरण और उन पर चर्चा भी हिन्दी में ही होगी।

संगोष्ठी में भाग लेने के लिए आपको अपने प्रस्तावित शोध आलेख का एक 'एब्स्ट्रैक्ट' भेजना होगा। यहाँ 'एब्स्ट्रैक्ट' से आशय है कि आपके आलेख के मुख्य बिन्दु क्या होंगे, अपनी बात को पुख़्ता रूप से रखने के लिए आपके अवलोकन और तर्क की पुष्टि के लिए या ध्यान आकर्षित करने के लिए आप कौन-से साहित्य व शोध प्रविधि का सहारा लेंगे, और इन सबसे आप किन बातों की स्थापना करना चाहेंगे।

आप अपने प्रस्तावित पर्चे का एब्स्ट्रैक्ट 15 मई, 2022 तक भेज सकते हैं। एब्स्ट्रैक्ट 500 से 800 शब्दों तक का हो सकता है। कृपया 'एब्स्ट्रैक्ट' के अन्त में अपना संक्षिप्त परिचय, इमेल, डाक का पता तथा फ़ोन नम्बर का उल्लेख अवश्य करें। जहाँ तक सम्भव हो 'एब्स्ट्रैक्ट' वर्ड फाइल में यूनीकोड में भेजें। साथ ही इस फाइल की एक पीडीएफ भी भेजें।

अपने एब्स्ट्रैक्ट seminar.artssportseducation@gmail.com पर भेजें।

एब्स्ट्रैक्ट प्राप्त होने पर संगोष्ठी की अकादमिक समिति उस पर विमर्श के बाद अपनी स्वीकृत ईमेल के माध्यम से आपको भेजेगी। एब्स्ट्रैक्ट स्वीकृत होने के बाद आप पूर्ण आलेख लिखना आरम्भ कर सकते हैं। पूर्ण आलेख भी उक्त ईमेल पते पर ही भेजा जाना है। और अधिक जानकारी के लिए दिए गए ईमेल पर सम्पर्क कर सकते हैं।

मुद्रक तथा प्रकाशक मनोज पी. द्वारा अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डेवलपमेंट के लिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, प्लॉट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव सोसाइटी, E-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा भोपाल, मध्यप्रदेश 462039 की ओर से प्रकाशित एवं गणेश ग्राफ़िक्स, 26-बी, देशबंधु परिसर, प्रेस काम्प्लेक्स, एम.पी. नगर, जोन-1 भोपाल द्वारा मुद्रित।

सम्पादक : गुरबचन सिंह